

सुधि के स्वर

शकुन्तला सिरोठिया
एम० ए०

प्रकाशक
श्री वेणीमाधव शर्मा
एडवोकेट
कोटा (राजस्थान)

प्रथम संस्करण नवम्बर १६५६
मूल्य १॥)

मुद्रक—
श्री प्रेमचन्द मेहरा
न्यू ईरा प्रेस, इलाहाबाद

भूमिका

कवियित्री शकुन्तला सिरोठिया के इस गीतसंग्रह का नाम 'सुधि के स्वर' कवित्व की व्यञ्जना के साथ ही साथ स्वयंसिद्ध भी है. सुधि के स्वर होते हैं, चित्र होते हैं, नृत्य होते हैं, मूर्तिरूप और स्वाद-रस भी होते हैं। जीव-मार्ग और सृष्टि-दर्शन देश-विदेश के महाकवि सुधि के स्वर में आ गये हैं। प्रस्तुत संग्रह भी उसी दिशा में कवियित्री शकुन्तला का प्रयास है जो पाठक के मन में तन्मयता और कोमल, मधुर भावनाओं को जन्म देता है। गीत पठनीय हैं। गाये जाने पर सुननेवालों को सम्मोहित भी कर सकेंगे। भाषा, भाव और विचार की संगति बहुत अंशों में निभ गई है।

अँगरेजी साहित्य में ऐसी कविताओं को 'लिरिक' कहा गया है जिसके अनुकरण या प्रभाव में महादेवी, पन्त आदि की रचनाएँ बनीं। "कवि द्वारा अपनी ही भवनाओं की अभिव्यक्ति 'लिरिक' है।" अँगरेजी के समर्थ आलोचक रस्किन के इन शब्दों से मतभेद का कोई प्रश्न नहीं उठता। प्रश्न केवल यह है कि क्या कवि की कोई अपनी भावना होती भी है? कोई एक भावना भी ऐसी जो जीव-धर्म में सब कहीं व्यापक नहीं है? कवि अपनी सृष्टि में आसक्त है या अनासक्त! वह व्यक्ति है या विधाता! इन बातों के उत्तर का अवसर यहाँ नहीं है। अँगरेजी साहित्य के प्रभाव में इस देश में जितना साहित्य बना है उसमें कवि व्यक्ति मात्र है, अपनी सृष्टि में आसक्त है, मातृभूमि के प्रति आस्था खोकर वह 'स्वर्णभूमि', 'स्वर्ण रश्मि', 'रजत शिखर' का भ्रम सब ओर फैला रहा है। किशोर-वयस् की भावनाओं में डूब-उतराकर रतिभाव उसके लिए कुण्ठा और विषाद है, सृष्टि का मूल या देही का अमृतत्व नहीं।

छायावाद के सारे काल्पनिक रंग इन गीतों में हैं जो पहले महादेवी

के गीतों में आ चुके हैं। महादेवी के गीत कुण्ठा और विषाद की परिधि के बाहर कभी नहीं होते। हर्ष की बात है कि इस संग्रह में ऐसी पंक्तियाँ भी हैं जिनमें कविकर्म के मूल लक्ष्य 'तृप्ति', आनन्द और प्रीति के प्रति भी आग्रह है। व्यक्तित्व-मोह और निज के प्रति आसक्ति का अविवेक भी इनमें उतना दारुण नहीं है जितना कि पूर्ववर्ती ऐसे गीतों में आ चुका है। उद्धरण देकर तुलनात्मक विवेचना में यह बात सिद्ध की जा सकेगी; पर यहाँ तो कवियित्री के इन गीतों के अनुपात में ही दो शब्द कहने हैं। शकुन्तला जी से मैं यह आशा करूँगा कि वे व्यक्तित्व-प्रधान गीत की रंगभूमि के बाहर आकर कवि-कर्म का उस विस्तृत भूमि पर चलें जिस पर हमारे मूल भाव नौ रसों के रूप में सब कहीं हरे-भरे हैं। वीर और रौद्र जैसे रस उनके लिए नहीं हैं, पर श्रृङ्गार, करुण और शान्त में वे रम सकेंगी। अनुराग और वात्सल्य उनकी वाणी का विभव बनेगा, इसका विश्वास मुझे इस संग्रह से हो रहा है। इस संग्रह को मैं रुचि से पढ़ गया केवल इसलिए कि इसमें मेरा मन रमा। पाठकों का मन भी रमेगा इसमें, इस विश्वास में मैं कवियित्री शकुन्तला की इस कृति का स्वागत करता हूँ।

प्रयाग
कार्तिक शुक्ल १०—संवत् २०१३

—लक्ष्मीनारायण मिश्र

निवेदन

'सुधि के स्वर' से पूर्व मेरा एक गीत-संग्रह 'दीप' प्रकाशित हो चुका है। प्रस्तुत गीत-संग्रह का नाम 'उलझन' रखने का निश्चय था, किन्तु 'सुधि के स्वर' अधिक उपयुक्त समझकर यह परिवर्तन किया गया। अनेक विषम परिस्थितियों-वश इसका प्रकाशन बहुत समय तक स्थगित रहा।

इन गीतों में हृदय की अन्य भावनाओं की तुलना में अन्तर का मोह और दुर्बलताएँ ही अधिक साकार हुई हैं। भावुक क्षणों में मेरा मन-कोकिल जब आत्म-संवरण नहीं कर सका तभी ये गान प्रस्फुरित हुए। ये अचेतनावस्था की सृष्टि हैं—दुख-सुख की गहन अनुभूति में उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं रह जाता।

धुल सदा को बह गये री
ज्ञान औ' अज्ञान मेरे।

हिन्दी के यशस्वी नाटककार श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र की मैं विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होंने अपने अत्यधिक उलझे समय में से कुछ क्षण पुस्तक की भूमिका लिखने के लिए दिये। मिश्रजी गुरुजन हैं, उन्हें धन्यवाद देने की धृष्टता मैं कर ही कैसे सकती हूँ?

'सुधि के स्वर' को पुस्तक रूप देने में मुझे भाई अंचलजी से बहुत बल और प्रोत्साहन मिला है। उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। मनोगत भावों को व्यक्त करने में शब्द सदैव असमर्थ हैं, फिर बहिन भाई को रोली और अक्षत के अतिरिक्त कुछ दे ही कब सकी है?

श्रद्धेय श्री सुमित्रानन्दन पंत जी ने अपना अमूल्य समय देकर मेरे गीतों में सुधार-संकेत दिये जिसके लिए मैं उनके प्रति आभार प्रकट करती हूँ।

अग्रज श्री वेणीमाधव शर्मा बी०, एस्० सी० एल्-एल० बी० (एडवोकेट कोटा, राजस्थान) को मैं अपनी आन्तरिक श्रद्धा अर्पित करती हूँ जिनकी स्नेह-सिक्त प्रेरणा ने मुझे बाल्यकाल में ही कविता-क्षेत्र में गतिशील किया और जिनके प्रयत्न से 'सुधि के स्वर' प्रकाश में आ रहे हैं।

'न्यू ईरा' के संस्थापक श्री मेहरा जी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने मुद्रण में निजी रुचि और लगन के साथ सहयोग दिया।

श्री प्रयागराज
दीपावली, संवत् २०१२

शकुन्तला सिरोठिया

१

तुम छिपो चाहे जहाँ प्रिय, मैं तुम्हें पहिचान लूँगी।

कुमुदिनी के शशि बनो, अथवा
कमल के रवि बनो तुम;
तुम उषा के प्राणवल्लभ, या
निशा की छवि बनो तुम।

दिवस हो या रात्रि हो, पर मैं तुम्हें तो जान लूँगी।

तुम्हीं में अरमान मेरे,
हो तुम्हीं धन-मान मेरे,
हैं तुम्हारे ही लिए
दिन-रात आनन्दित गान मेरे।

मैं तुम्हीं में घुल गई प्रिय, और क्या वरदान लूँगी।

२

घनी जब अँधेरी, गगन मेघ छाते
मुझे प्राण तब तुम बहुत याद आते !

उदासी लिये चाँदनी लौट जाती,
घिरी मेघ से रात भी छटपटाती,
दुखी हो पपीहा पिया को बुलाते।
मुझे प्राण तब तुम बहुत याद आते !

सिहरती उमङ्गों भरी बात आती,
किसी की मधुर सुधि भरी गुनगुनाती,
जहाँ धूल-कण फूल बन मुस्कराते।
मुझे प्राण तब तुम बहुत याद आते ॥

ये काली घटाएँ, अँधेरा डराता,
कहीं का पथिक पंथ भी भूल जाता,
किसी के नयन अश्रु-बरसात लाते।
मुझे प्राण तब तुम बहुत याद आते ॥

रजत चूनरी ऊर्मियों की पहिनकर
नदी चल पड़ी विघ्न सारे सहन कर,
उमड़ कर किनारे उसे अंक लाते।
मुझे प्राण तब तुम बहुत याद आते ॥



३

ओ! मेरी श्वासों में उलझे
मेरी उलझन सुलझा दे रे!

यह उर में कैसी, उथल-पुथल
तन आज शिथिल, मन आज विकल,
निर्जीव उँगलियाँ तारों पर,
स्वर लहरी में भारी हलचल।

भूले अतीत रागों को गायक
फिर वीणा पर गा दे रे!

मैंने फूलों का उर झाँका,
काँटों-काँटों में भरमाई,
मैं जलधि-उर्मियों पर नाची,
मैं चट्टानों से टकराई।

तू पार, न तुझको छू पाई
मुझको ही पार लगा ले रे!

४

मैं उलझन बन कर ही आई,
कब अपने को सुलझा पाई ?

नभ में श्यामल दल मेघ घिरे,
भू-तल पर बन जलधार गिरे;

मैं चिर-प्यासी दो बूँदों की
कब अपनी प्यास बुझा पाई ?

रवि आता जगत जगा जाता,
अणु-अणु ज्योतिर्मय हो जाता ;

पर मैं, उर का घन अंधकार
आजीवन नहीं मिटा पाई।

५

मैं निर्जन वन की निर्झरिणी
जग का कोलाहल क्या जानूँ ?

मैं तममय नभ उर का विषाद
क्या जानूँ ऊषा का सुहाग ?
मैं रजनी रोने वाली ही
संध्या का गायन क्या जानूँ ?

मैं पाषाणों में पली हुई
भू-रज में ही घुल-मिली हुई
है प्रकृति सहेली ही मेरी
जग झूठा नाता क्या जानूँ ?

गिरि-उर से ही निकली उलझी,
पर बढ़ी चली, गिरती-पड़ती,
नित विपदाओं में ही खेली
मैं सरल सुजीवन क्या जानूँ ?

[सुधि के स्वर

६

किसके अरमान लिये जलते हो,
मेरे दीपक, सच बोलो ।

मेरा जगती से मेल नहीं—
जग कोलाहल, मैं एकाकी;
अपने तममय जीवन में बस
केवल तुमको पाया साथी।

[साब